शोध मंथन, Impact Factor 5.463 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X,
Vol. X, No. 1, pp (1-13), Jan-March 2019

कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में वर्णित शिक्षा– दर्शन एवं उसकी वर्तमान में प्रासंगिकता

डॉ0 सारिका शर्मा

असिस्टेंट प्रोफेसर, आई०एन० पी०जी० कॉलिज, मेरठ।

इमेल drsarikasharma70@gmail.com

सारांश

कौटिल्य एक महान् दार्शनिक थे। उनका विचार केन्द्र मनुष्य था। उन्होंने मनुष्य के वास्तविक रूप को जानकर उस के जीवन के अन्तिम उद्देश्य को निश्चित करने का प्रयास किया। मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति का साधन मार्ग निश्चित करने में महान् दार्शनिक कौटिल्य की रूचि थी और इन सबके ज्ञान एवं प्रषिक्षण के लिए वे शिक्षा को आवश्यक मानते थे। इस प्रकार कौटिल्य की दृष्टि में शिक्षा मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति का साध न होती है। इसीलिए उन्होंने शिक्षा के विभिन्न अंगों जैसे पाठ्यक्रम शिक्षण पद्वति, शिक्षा का उद्देश्य, स्वरूप, कक्षा का आकार आदि पर अपने विचार प्रस्तुत किए।

यह निश्चित है कि कौटिल्य द्वारा दी गयी सभी नीतियों को वर्तमान परिस्थितियों में लागू नहीं किया जा सकता, किन्तु यह भी सत्य है कि उनकी बहुत सी नीतियाँ आज भी उपयोगी हैं और कुछ नीतियों में यथासंभव परिमार्जन करके उसका उपयोग किया जा सकता है और वर्तमान शिक्षा में व्याप्त भ्रष्टाचार, अराजकता, अनैतिकता, बेरोजगारी, अनुशासनहीनता, कृषि उद्योग आदि की ओर छात्रों के मस्तिष्क को मोड़ा जा सकता है।

शोध का उद्देश्यः–

इस शोध का मुख्य उद्देश्य कौटिल्य के शैक्षिक विचारों की खोज करना तथा वर्तमान परिस्थितियों में उनकी प्रासंगिकता की जाँच करना है।

शोध की प्रविधिः–

यह एक विश्लेषणात्मक अध्ययन है जो कि द्वैतीयक आंकड़ों पर आधारित है। यह निम्न भागों में विभाजित है–

(क) कौटिल्य एवं अर्थशास्त्र पुस्तक का परिचय

(ख) अर्थशास्त्र में वर्णित कौटिल्य के शैक्षिक विचार अर्थशास्त्र

(ग) वर्तमान में शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता

आंकड़ों का संकलनः–

अर्थशास्त्र मूल रूप में संस्कृत भाषा में लिखी गयी है। कालान्तर में विभिन्न विद्वानों द्वारा हिन्दी व अंग्रेजी भाषा में इसका अनुवाद किया। अतः आंकड़ों के संकलन का स्रोत निम्न है–

(क) विभिन्न विद्वानों द्वारा 'अर्थशास्त्र' पुस्तक पर लिखी पुस्तकें व उनके अनुवाद

(ख) जर्नल में छपे शोध पत्र

(ग) शोध रिपोर्ट

(घ) इंटरनेट वेबसाइट

(ङ) मूल 'अर्थशास्त्र' पुस्तक से उद्धृत पंक्तियां

"पृथिव्या लाभे पालने च यावन्त्यर्थ शास्त्राणि पूर्वाचार्यैः।
प्रस्थापितानि प्राय षस्तानि संहृत्यै कमिदय् अर्थशास्त्रं कृतम्।।"

(कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम् 1.1.1.1)

निष्कर्षः–

कौटिल्य की बहुत सी नीतियां आज भी उपयोगी हैं, उनमें यथासम्भव परिमार्जन करके उसका उपयोग किया जा सकता है।

"कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में वर्णित शिक्षा–दर्शन एवं उसकी वर्तमान में प्रासंगिकता"

'अर्थशास्त्र' पुस्तक लिखकर विष्णु गुप्त कौटिल्य देश के सबसे बड़े शास्त्रकार बन गए। 'अर्थशास्त्र' पुस्तक 15 अध्यायों में विभक्त है। चाणक्य ने अर्थशास्त्र के अलावा चाणक्य सूत्र व चाणक्य राजनीतिशास्त्र लिखी। राजनीति के मान्य सिद्धान्तों के रूप में उन्होंने जो मापदण्ड स्थापित किए हैं। आज 2500 वर्ष बाद भी संसार उन्हें ज्यों का त्यों मानता है तथा मानता रहेगा। **(कौटिल्य कालीन भारत : भारत के प्रथम राश्ट्रपिता का उदय– आचार्य दिपंकर, पृ० 54)**

कौटिल्य का शिक्षा दर्शन–

(I) कौटिल्य के मानव जीवन सम्बन्धी विचार– कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में स्पष्ट कहा कि अति कष्टमय जीवन व्यतीत करना मानव जीवन का आदर्श नहीं हो सकता। इसलिए कि कौटिल्य यह मान कर चलते थे कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य त्रिवर्ग में समन्वय स्थापित करने से है। त्रिवर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ, काम।

(II) कौटिल्य के विद्या सम्बन्धी विचार– कौटिल्य ने विद्या चार प्रकार की बतायी हैं–

(1) आन्वीक्षिकी विद्या

(क) सांख्य

(ख) योग

(ग) लोकायत

"आन्वीक्षकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिष्चेति विद्याः"

(प्रकरण 1, अध्याय 2, अर्थशास्त्र)

(2) त्रयी विद्या–

(क) ऋक (ऋग्वेद)

(ख) यजु एवं (यजुर्वेद)

(ग) साम (सामवेद)

"सामवेदादिदं गीतं संजग्राह पितामहः"

(3) वार्ता– आचार्य कौटिल्य विद्या के तीसरे प्रकार में कृषि, पशुपालन और वाणिज्य को सम्मिलित रूप से वार्ता नाम देते हैं।

"कृषि पशुपाल्ये वाणिज्या च वार्ता।"

(कौटिलियम्)

अर्थशास्त्र, प्रकरण 1, अध्याय 03

"मनुष्याणां कृतिरर्थः मनुष्यवती भूमिरित्यर्थः तस्या पृथिव्या।
लाभ पालनो पायः शास्त्र मर्थ शास्त्र मिति।।"

(कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 15, अध्याय 1)

अतः वार्ता के पाँच अंग बन गए। कृषि, पशुपालन, वाणिज्य, कुसीद, कारूशिल्प।

(हिन्दू राज्य और समाज–शिव स्वरूप सहाय, पृ० 282)

(4) दण्ड– यह चतुर्थ विद्या है।

"तस्माद्द द्दण्ड मूला स्तिस्नो विद्याः"

कौटिल्य अर्थशास्त्र–प्रकरण 2, अध्याय 4

कार्तिकेय को दण्ड नीति का प्रवर्तक कहा गया है। दण्ड के भय से प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वधर्म पर रहता है तथा दूसरों के भी स्वधर्म पालन करने का मार्ग–प्रशस्त करता है।

(III) शिक्षित होने या शिक्षा ग्रहण करने पर बल सम्बन्धी विचारः–

उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण अवश्य करनी चाहिए।

रुप यौवन सम्पन्नाः विशाल कुल सम्भवाः।
विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः।।

(चाणक्य नीति, अध्याय 3/81)

उन्होंने माता–पिता को भी शत्रु के समान बताया था, जो कि अपने बच्चों को शिक्षित नहीं कराते हैं।

"माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा।।"

(चाणक्य नीति, अध्याय 2/11)

(IV) शिक्षक या गुरु को पुस्तकों से अधिक महत्व प्रदान करने सम्बन्धी विचारः–

कौटिल्य का मानना था कि विद्याअध्ययन केवल पुस्तकों के आधार पर न करके गुरु द्वारा प्राप्त करनी चाहिए।

"पुस्तक प्रत्ययाधीतं नाधीतम् गुरुसन्निधौ।
सभामध्ये न शोभन्ते जारगर्भा इव स्त्रियः।।"

(चाणक्य नीति, अध्याय 17/1)

(V) निर्धनों के लिए विद्या सम्बन्धी विचारः–

"विद्या धनं धनानां।"

(वही, 295)

कौटिल्य ज्ञान प्राप्त करने को कामधेनु प्राप्त करने के सदृश्य बतलाते हैं–

कामधेनु गुणा विद्या ह्यकाले फलदायिनी
प्रवासे मातृ सदृशी विद्या गुप्तं धनं स्मृतम्।

(वही, नीति, 4/5)

(VI) विनय सम्पन्न विद्या सम्बन्धी विचारः–

मनुष्यों को ऐसे ज्ञान की प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिए, जससे वे नम्र, और व्यवहार कुशल बन सके। विनय सम्पन्न विद्या समस्त आभूषणों का आभूषण है–

भूषणानां भूषाणं सविनय विद्या।

(वही, 368)

(VII) आर्थिक विकास सम्बन्धी विचारः–

तत्कालीन समाज में विभिन्न दार्शनिक विचार धाराओं में जैसे– जैन दर्शन, बौद्ध दर्शन, चार्वाक दर्शन तथा वैदिक आदि में वाद–विवाद चल रहा था। कौटिल्य ने सभी में सामंजस्य बनाते हुए जीवन का वास्तविक उद्देश्य त्रिवर्ग धर्म, अर्थ, काम में समन्वय स्थापित करना स्वीकार किया।

(VIII) विद्या को आनन्द का स्रोत मानाः–

नाऽस्ति कामसयो व्याधिर्नास्ति मोहसमो रिपुः।
नाऽजि कोपस्यो वरिर्नाऽस्ति ज्ञानात् परम् सुखम्।।

(चाणक्य नीति, 5/12)

(IX) भक्ति एवं धार्मिक भावना का विकास सम्बन्धी विचारः–

धर्मे तत्परता मुखे मधुरता दाने समुत्साहता।
मित्रेऽवञ्चकता गुरौ विनयता चित्तेऽति गम्भीरता।।
आचारे शुचिता गुणे रसिकता शास्त्रेषु विज्ञानता।
रूपे सुन्दरता शिवे भजनता सत्स्वेव संदृश्यते।।

(चाणक्य नीति, 12/14)

(X) वैदिक नीति के अनुसार दिनचर्या व्यतीत करने पर बलः–

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुं नाभिवन्दति।
श्वान योनिशतय् भुक्व्वा चाण्डालेष्व भिजायते।।

(चाणक्य नीति, 13/18)

गायत्री मन्त्र को आत्मसात करना, संध्या, पूजन व्रतों का अनुपालन करना आवश्यक था।

(XI) चारों पुरुषार्थ में संतुलन बनाते हुए विद्याअध्ययन पर बलः–

धर्म धनं च धान्यं च गुरोर्वचनमौषधम्।
सुगृहीतं च कर्त्तव्यमन्यथा तु न जीवति।।

(चाणक्य नीति, 14/19)

शिक्षा का उद्देश्य बालकों के जीवन में विभिन्न आयामों को विकसित करते हुए संकल्पित जीवन चरित्र का निर्माण करना होता था।

(XII) ज्ञान को आत्मसात करने पर बलः–

पठन्ति चतुरोवेदान् धर्मशास्त्राण्यनेकशः।
आत्मानं नैव जानन्ति दर्वी पाकरंस यथा।।

(वही, 15/12)

(XIII) मानवीय गुणों को विकसित करने पर बलः–

विद्यार्थियों में सत्य, दया, अहिंसा तथा प्रेम का संदेश से मुक्त भाव विकसित करना भी शिक्षा का उद्देश्य था।

सत्येन धार्यते पृथिवी सत्येन तपते रविः।
सत्येन वाति वायुश्च सर्व सत्ये प्रतिष्ठितम्।।

(चाणक्य नीतिः, 5/19)

(XIV) मूर्ति पूजा एवं अंधविश्वास का खंडनः–

ने देवो विद्यते काष्ठे न पाषाणे न मृन्यये।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद् भावो हि कारणम्।।

(वही, 8/12)

(XV) प्रकृति एवं जीव–जन्तुओं से भी शिक्षा लेने पर बलः–

सिंहादेकय् बकादेंक शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात।
वायसात्पन्च शिक्षेच्च षट् शुन स्त्रीणी गर्दभात्।।

(चाणक्य नीति, 6/14)

(XVI) सामाजिक उत्तरदायित्वों का निष्पादनः–

धर्म का आचरण करना, स्वाध्याय में प्रमाद न करना, कुशल एवं योग्य संतानों को जन्म देना आदि सामाजिक कर्त्तव्यों में शामिल था।

वरमेको गुणी पुत्रो निर्गुणैश्च शतैरपि।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च ताराः सहस्त्रशः।।

(चाणक्य नीति, 4/6)

(XVII) विद्यार्थी जीवन में कठोर अनुशासन अपनाने पर बलः–

सुखार्थी वा त्यजेत् विद्यां विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम।
सुखार्थिनः कुतो विद्या विद्यार्थिनः कुतो सुखम्।।

(चाणक्य नीति, 10/3)

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादं श्रंगार कौतुके।
अतिनिद्राऽति सेवे च विद्यार्थी ह्यश्ट वर्जयेत्।।

(चाणक्य नीति, 11/10)

(XVIII) कौटिल्य काल में शिक्षण संस्थाएँः–

कौटिल्य कालीन समय में चार प्रकार की षिक्षण संस्थाओं का उल्लेख मिलता है। जो कुल, गोत्र, चरण और परिशद् में विभक्त थे।

(अष्टाध्यायी, पाणिनी, पृ० 12)

(क) कुल
(ख) गोत्र
(ग) चरण
(घ) परिषद्

(XIX) शिक्षण पद्धति का स्वरूपः–

कौटिल्य ने शिक्षा प्राप्ति के लिए निम्नलिखित चरण या पद्धति बतलायी हैं–

1. शुश्रुशा
2. श्रवणम्
3. ग्रहणम्
4. धारणम्
5. विज्ञान
6. ऊहापोह
7. तत्वाभिनिवेश

प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास

(ओम प्रकाश, 234)

(XX) कौटिल्य कालीन पाठ्यक्रमः–

कौटिल्य कालीन उपलब्ध साक्ष्यों से अभिज्ञापित होता है कि विद्यार्थी वेद, शास्त्र, दर्शन, तर्क शास्त्र, पुराण, नाटक, स्मृतियों, काव्य ग्रन्थों, व्याकरण, साहित्य इसके अलावा धनुर्वेद, आयुर्वेद, युद्ध कला, इन्द्रजाल, सर्पक्रीड़ा, रत्नान्वेषण आदि विषयों की शिक्षा दी जाती थी।

(प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, संजय कुमार सिंह, पृ० 131)

(XXI) कौटिल्य कालीन शिक्षकः–

कौटिल्य के समय में शिक्षक के विभिन्न स्वरूपों का उल्लेख मिलता है–

- आचार्य
- उपाध्याय

- प्रवक्ता
- अध्यापक
- श्रोत्रिय
- गुरु
- ऋत्विक

(मनुस्मृति, 2.140–2.142)

(XXII) अयोग्य शिष्य को शिक्षा न देने पर बलः–

स्नेहाद्वा लोभतो वापि योऽनुगृहणाति दीक्षया।
तस्मिन गुरौ च शिष्ये तु देवता शापमाप तेत।।

(प्रायश्चितसार, 3650)

अर्थात् कौटिल्य का मानना था कि स्नेह या लोभ के कारण अयोग्य को शिक्षा मिल जाने पर गुरु और शिष्य दोनों को पाप लगता है।

(XXIII) समानुशासनः–

शैक्षिक परिवेश में कौटिल्य साम्यता के पक्षधर हैं। चाहे राजा का बालक हो या निर्धन का निर्धारित विधान सबके लिए समान रूप से लागू होता था।

(XXIV) कक्षा का आकारः–

कौटिल्य काल की शिक्षा प्रणाली में एक कक्षा में दस से पन्द्रह तक विद्यार्थी होते थे, इसलिए गुरु प्रत्येक विद्यार्थी पर पूरा ध्यान देता था।

(प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, ओम प्रकाश, पृ० 214)

(XXV) कौटिल्य काल एवं लिपिः–

भोज पत्र पर लेखन कला का विकास हो चुका था। बौद्ध धर्म ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि मनुष्य लेखन कला से भली भांति परिचित थे। "ललित विस्तार" में 64 "लिपियों" के नाम दिए गए हैं, जो ईसा की पहली दो शताब्दियों में भारत में प्रयुक्त होती थीं।

(प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, ओम प्रकाश, पृ० 229)

(XXVI) कौटिल्य के विचार में नीच व्यक्ति को ज्ञान न देने के पक्ष मेंः–

नीच व्यक्ति के पास यदि किसी प्रकार का ज्ञान है तो वह इसका उपयोग भलाई के लिए नहीं वरन् पाप–पूर्ण कार्यों के लिए करता है।

नीचस्य विद्याः पापकर्मणि योजयन्ति।

(वही, 274)

(XXVII) कौटिल्य ने वर्तमान पक्ष को सबलता दीः–

कौटिल्य से पूर्व के सभी ऋषियों और विद्वानों ने जीवन के बाद की समस्याओं पर अर्थात् मोक्ष पर विचार किया। परन्तु कौटिल्य पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने जीवन के वर्तमान पक्ष को सबलता दी।

(XXVIII) चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व विकास पर बलः–

व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, आत्म संयम, उत्तम आचरण और शारीरिक और मानसिक पुष्टता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रत्येक पक्ष पर आचार्य कौटिल्य की सूक्ष्म दृष्टि अवश्य पड़ी है।

(XXIX) सांस्कृतिक जीवन का उन्नयनः–

ब्राह्मण के लिए सम्पूर्ण वेदों को कंठस्थ करना तथा उसे भावी संतति को कंठस्थ कराना धर्म माना गया था। चाणक्य ने अपना जीवन सदैव इस कार्य हेतु समर्पित किया और ब्राह्मणों का एक वर्ग इस कार्य के लिए तैयार किया।

(XXX) शिक्षक शिक्षार्थी सम्बन्ध पिता पुत्रवत्ः–

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति।
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः।।

(चाणक्य नीति, 4/19)

(XXXI) कौटिल्य के सैन्य शिक्षा सम्बन्धी विचारः–

कौटिल्य 3 प्रकार के युद्धों का उल्लेख करते थे। इन तीनों प्रकार के आधार पर ही सैन्य शिक्षा प्रदान की जाती थी।

1. **प्रकाश युद्ध**
2. **कूटयुद्ध**
3. **तृष्णि युद्ध**

(कौटिल्य कालीन भारत, आचार्य दीपंकर, पृ० 224)

कौटिल्य की शिक्षा प्रणाली में सैन्य शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान था। सैन्य शिक्षा ही उनकी सम्पूर्ण कूटनीतिज्ञता का आधार थी।

(XXXII) कौटिल्य कालीन मूल्यांकन एवं समावर्तनः–

ज्ञान के सन्दर्भ में आचार्य की सन्तुष्टि शिक्षा की पूर्णता मानी जाती थी। जिन उद्देश्यों के निहितार्थ ब्रह्मचारी का गुरुकुल में प्रवेश हुआ था। उन उद्देश्यों की प्राप्ति में ब्रह्मचारी कहाँ तक सफल हुआ है, यही मूल्यांकन का मुख्य आधार था।

समावर्तन संस्कार के समय शास्त्रार्थों के माध्यम से छात्रों की उच्चतम योग्यता का आंकलन किया जाता था।

(ब्रह्मचर्य पाशोउद्वर्शात, अर्थशास्त्र, 1.5.9)

(XXXIII) आचार्य कौटिल्य द्वारा शूद्रों को 'वार्ता' विद्या प्रदान करने का विचारः–

समाज के निम्न वर्णों (अवान्तर जातियों सहित) को ब्राह्मणवादी धार्मिक व्यवस्था से जोड़ने के यत्न की कड़ी में शूद्रों को 'वार्ता' विद्या ग्रहण करने की अनुमति कौटिल्य द्वारा प्रदान की गयी थी।

(सामाजिक न्याय और दलित संघर्ष, राम गोपाल सिंह, पृ० 53)

(XXXIV) कौटिल्य का वर्णव्यवस्था व आश्रम व्यवस्था बनाए रखने एवं उसका अनुसरण करने पर बलः–

आचार्य कौटिल्य ने वर्णों और आश्रमों की परम्परागत व्यवस्था को स्वीकार किया तथा इनके कर्त्तव्यों का विवरण प्रस्तुत किया। इसके पीछे इनका तर्क था कि एक बार वर्णों तथा आश्रमों के धर्मों के उलट–पुलट हो जाने पर समाज में अराजकता फैल सकती है।

(प्राचीन हिन्दू राजनीति के कुछ पहलू, डॉ० भंडारकर, पष्० 86)

(XXXV) शिक्षा राज्य के अधीनः–

कौटिल्य के काल में राज्य, शिक्षा के प्रति अपने कर्त्तव्य की ओर सजग था और शास्त्रों के आचार्य को पेंशन देता था।

(कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्, वाचस्पति गैरोला, पृ० 19)

(XXXVI) औपचारिक शिक्षा का प्रारम्भ उपनयन संस्कार उपरान्तः–

तत्कालीन समय में उपनयन संस्कार समाज के 3 वर्णों तक ही सीमित था। शूद्र इसके हकदार नहीं थे। ब्राह्मण बालक का 8 वर्ष, क्षत्रिय बालक का 11 वर्ष और वैश्य का 12 वर्ष की आयु में उपनयन संस्कार मान्य था।

(कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्, वाचस्पति गैरोला, प्रकरण 2, अध्याय–2)

(XXXVII) कौटिल्य कालीन शिक्षा का आर्थिक आधारः–

कौटिल्य के काल से वार्ता विद्या को महत्व प्रदान किया जाने लगा, जबकि इससे पहले त्रयी का विषेश महत्व था। इसका कारण भौतिकवादी दृष्टिकोण का उदय एवं विकास था। प्रत्येक व्यवसाय से सम्बन्धित नियम भी बनाए गए और कुछ पदों एवं व्यवसाय हेतु वेतन एवं पेंशन भी निर्धारित की गयी थी।

कौटिल्य की आर्थिक नीतियों के कारण ही "अर्थशास्त्र" को पाँचवा वेद स्वीकार किया गया।

(कौटिल्य कालीन भारत, आचार्य दीपंकर, पृ० 98)

(XXXVIII) कौटिल्य कालीन शिक्षा का धार्मिक आधारः–

कौटिल्य के समय एक तरफ उत्तर वैदिक कालीन दर्शन का प्रभाव था तो दूसरी ओर जैन धर्म और बौद्ध दर्शन का प्रभाव। कौटिल्य को इन तीनों के बीच समन्वय बनाना था। उनकी समन्वयवादी नीति के दर्शन हमें उनके ग्रन्थ के प्रथम वाक्य से ही मिल जाते हैं, जो इस प्रकार है–

"ऊँ नमः शुक्रवृहस्पतिभ्याम्"

रचयिता ने अपने मंगलाचरण में समन्वित रूप से 2 परस्पर विरोधी विचारधारा के लोगों के साथ नमस्कार किया है।

(कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्, रघुनाथ सिंह, पृ० 6)

(XXXIX) कौटिल्य के विचार में राजा की शिक्षाः–

कौटिल्य ने राजाओं के लिए अनौपचारिक शिक्षा पर विशेष बल दिया है। राजा को अपने छः शत्रुओं काम, लोभ, अहंकार, क्रोध, मद्यपान व धृष्टता के और चार विशिष्ट लालसाओं आखेट, द्यूत, पान व कामिनी के विरूद्ध अव्याहन युद्ध चलाना चाहिए। कौटिल्य का विचार था कि राजा को आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति का ज्ञान होना चाहिए तथा अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र व दण्डनीति में पारंगत होना चाहिए।

(कौटिल्यीय अर्थशास्त्र का सर्वेक्षण, कृष्णराव, पृ० 65)

(XL) कौटिल्य ने अपनी पुस्तक अर्थशास्त्र में कृषि को महत्व देकर एक विषय का स्वरूप प्रदान किया।

बहुहल परिकृष्टायां स्वभूमो दासकर्म कर दण्डप्रति कर्न्तमिर्वातयेत्
कर्षण यन्त्रोपकरण बलीवदैश्चैशामसगं कारयेत्।

(कौटिलीय अर्थशास्त्र, 2/24/41)

(XLI) कौटिल्य कालीन स्त्री शिक्षाः–

कौटिल्य काल में स्त्री शिक्षा का ह्रास हुआ। कदाचित इसी कारण कौटिल्य ने स्त्री शिक्षा की अधिक चर्चा नहीं की है, किन्तु तत्कालीन साहित्य से ज्ञात होता है कि उस काल में स्त्रियों को शिक्षा दी जाती थी, जो ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य वर्ण की कन्याएँ ही थीं। लड़कों के समान उनका भी उपनयन संस्कार होता था।

(भारतीय शिक्षा का इतिहास, मदन मोहन तथा डॉ० मालती सारस्वत, पृ० 47–48)

कौटिल्य कालीन शिक्षा दर्शन की वर्तमान शिक्षा के लिए प्रासंगिकताः–

उनके सम्पूर्ण ग्रन्थ का सम्यक् विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि जिस प्रकार एक आदर्श शिक्षक अपने विद्यार्थियों को प्रत्येक प्रकार की विद्या देकर उसे इस योग्य बना देना चाहता है कि वह भावी जीवन की प्रत्येक चुनौती का सामना कर सके। आचार्य कौटिल्य का लक्ष्य या उनकी शिक्षा का उद्देश्य भी यही था।

(1) आचार्य कौटिल्य ने सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ एवं गतिशील बनाने के लिए शूद्रों को 'वार्ता' विद्या का अधिकारी बनाया।

(2) कौटिल्य काल में आवीक्षिकी, त्रयी और दण्डनीति को ज्ञान के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त थी। जबकि पशुपालन कृषि, व्यवसाय को विद्या के संवर्ग से कम महत्ता प्राप्त थी। आचार्य कौटिल्य ने उक्त तीनों विद्याओं के साथ–साथ वार्ता विद्या को भी महत्ता दी और राजा को सुझाव दिया कि राजा किसानों को सभी प्रकार की सुविधाएँ प्रदान करे यदि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो आज की सरकारें भी किसानों को महत्व प्रदान करती है। लाल बहादुर शास्त्री का नारा "जय जवान जय किसान" इसका उदाहरण है।

(3) कौटिल्य वर्णव्यवस्था व आश्रम व्यवस्था के कठोर समर्थक थे। वर्ण व्यवस्था का सम्बन्ध सामूहिक व्यवस्था से था, तो आश्रम व्यवस्था का सम्बन्ध व्यक्तिगत व्यवस्था

से था और राष्ट्र के उन्नयन के लिए दोनों में समन्वय होना आवश्यक है। कौटिल्य काल में शिक्षा उद्देश्योन्मुख थी। अतः उसकी समाप्ति के पश्चात् आजीविका की समस्या कम होती थी। जहां तक वर्तमान शिक्षा का प्रश्न है, उद्देश्य स्पष्ट न होने के कारण वर्ण व आश्रम व्यवस्था खत्म हो जाने के कारण रोजगार जनित प्रतिस्पर्धाएँ चिन्ता, हताशा, निराशा और कुंठा पैदा हो रही है, जिसके कारण प्रतिभा का पलायन, मौलिकता का ह्रास तथा मानवीय संवेदनाओं का क्षय होना स्वाभाविक है।

(4) आचार्य कौटिल्य का मानना था कि शिक्षा अयोग्य व्यक्ति को न दी जाए। किन्तु वर्तमान काल में शिक्षा को सार्वजनिक किया जा रहा है। यहां तक कि उच्च शिक्षा और शोध हेतु भी जाति के आधार पर आरक्षण और अन्य सुविधाएं दी जा रही हैं, जिससे शिक्षा की गुणवत्ता में ह्रास हुआ है।

(5) राजा के चारित्रिक गुणों के सम्बन्ध में आचार्य कौटिल्य ने जो सीमाएं निर्धारित की हैं, उसकी समसामयिक परिस्थितियों में आज के नेतृत्वकर्त्ताओं में नितान्त कमी दिखती है।

(6) आचार्य कौटिल्य का मत था कि शिक्षार्थी इन्द्रियजय बने। इन्द्रियजय से अभिप्राय शास्त्रों में प्रतिपादित कर्त्तव्यों के सम्यक् अनुष्ठान से ही है।

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च।
पंचैतानि हि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः।।

अर्थात् आयु, कर्म, धन, विद्या और मृत्यु शिशु के गर्भ काल से ही निश्चित हो जाती है। वर्तमान काल में चिकित्सा विज्ञान और प्राणी विज्ञान भी इस सत्य को स्वीकारते हैं।

(7) कौटिल्य ने गुरु की महत्ता को स्वीकारते हुए सर्वोत्तम स्थान प्रदान किया। उन्होंने इसे पुस्तकीय ज्ञान से श्रेष्ठ एवं श्रेयस्कर बताया।

पुस्तक प्रत्ययाधीतं ना धीतं गुरुसन्निधौ।
सभामध्ये न शोभन्ते जारगर्भा इव स्त्रियः।।

(चाणक्य नीति, 17/1)

किन्तु शिक्षकों के लिये भी सख्त नियमावलि थी जिनका उन्हें पालन करना होता था। जैसे निष्पक्ष रहना, धन लोलुप न बनना आत्म संयमी आदि जो शिक्षक ज्ञान प्रदान करने के बदले धन की मांग करते थे वे बहिष्कृत कर दिए जाते थे। अगर आज के परिप्रेक्ष्य मे बात की जाए तो सभी शिक्षक वेतन लेते हैं और धन के आकर्षण से मुक्त नहीं रह पाते हैं। इसीलिए शिक्षक का स्थान पदच्युत हुआ है।

(8) कौटिल्य ने शिक्षा को राज्य या राजा के अधीन किया था। उसके संरक्षण, विकास एवं हस्तान्तरण से सम्बन्धित समस्त कार्य राजा और उसकी सभा में मंत्रियों द्वारा निर्धारित होते थे। इसीलिए शिक्षा में एकरूपता थी। कौटिल्य के राजा की ही भांति आज भारत में शैक्षिक प्रणाली के पूर्णरूपेण राजनियन्त्रित कर देना चाहिए, ताकि विभिन्न प्रकार के शैक्षिक विरोधाभासों से बचा जा सके।

(9) सामाजिक व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण के लिए आवश्यक है कि समाज के बहुसंख्यक लोगों को रोजगारोन्मुखी गतिविधियों से जोड़ा जाए। आचार्य कौटिल्य इसका मर्म भली भांति समझते थे। इसलिए आपने वार्ता विद्या को विशेष महत्ता प्रदान की। धनोत्पादन के मुख्य केन्द्र के रूप में बड़े–बड़े स्थानीय नगरों का निर्माण करवाया। इसके साथ ही विधिवत कृषि विभाग की स्थापना करवाने के लिए निर्देश दिया। कृषि फार्मों में श्रमिकों और शूद्रों को व्यापक स्तर पर रोजगार प्राप्त होता था। वर्तमान समय में समुन्नत कृषि नीति, कृषि फार्म हाउसों और वाणिज्यिक कृषि को अपनाकर काफी सीमा तक पलायन को रोका जा सकता है।

(10) आचार्य कौटिल्य ने भ्रष्टाचार निरोध के लिए भी कार्य किया और सख्त नियम बनाए। राजकर से मुक्त देवालय या ब्राह्मण से कर वसूलना, कर देने पर भी पंजिका में न चढ़ाना, रिश्वत लेकर बाजार में वस्तुओं की कीमत बढ़ा देना आदि उस समय भ्रष्टाचार के अन्तर्गत आते थे। आचार्य कौटिल्य ने इसके नियन्त्रण के लिए कुछ नियम बनाए। "यदि कोई निष्पक्ष राजहितेच्छु व्यक्ति किसी गबन की सूचना देता है तो अपराध सिद्ध हो जाने पर उस अपहृत धन का छठा भाग सूचना देने वाले को दिया जाना चाहिए। यदि सूचना देने वाला व्यक्ति कर्मचारी हो तो उसे बारहवां भाग दिया जाना चाहिए। यदि अपराध सिद्ध न हो सके तो सूचना देने वाले व्यक्ति को उचित शारीरिक या आर्थिक दण्ड दिया जाना चाहिए", ऐसे उनके कानून थे।

(कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्, वाचस्पति गैरोला, पृ० 112)

आज भी इस तरह के नियम हैं किन्तु उनमें सख्ती की कमी है। लचीलेपन के कारण भ्रष्टाचार पर नियन्त्रण नहीं हो पा रहा है।

(11) वस्तुतः आचार्य कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' सामाजिक जीवन की पूर्ण पद्धति का दर्शन है, किसी एकांगी जीवन का नहीं। कौटिल्य के शब्दों में–

"मनुष्यों की जीविका का साधन अर्थ है, मनुष्यों की आबादी से परिपूर्ण भूमि ही अर्थ है। इस भूमि की प्राप्ति एवं रक्षा के साधन जिस शास्त्र में बताए जाते हैं वह अर्थशास्त्र है।"

कौटिल्य का यह एक मौलिक चिंतन है कि वह उस भूमि को ही अर्थ मानते हैं, जहां जनसंख्या रहती है और जो भूमि पर श्रम करती है। कौटिल्य का सिद्धान्त सर्वदा अद्‌भुत है। इस प्रकार उन्होंने श्रम की महत्ता भी स्वीकार की।

सन्दर्भ ग्रंथ

(1) *कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्* (खण्ड 1, 2 तथा 3), डॉ० रघुनाथ सिंह, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 1983 ई०, पृ0स0–6

(2) *कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्,* वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, तृतीय संस्करण, 1984 ई०, पृ0स0–19, 112

(3) *कौटिल्य कालीन भारत*, आचार्य दीपंकर, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, तृतीय संस्करण, 2003 ई०, पृ0स0—**54, 98, 224,**

(4) वही, पृ० **38, 274, 295, 368,**

(5) यजुर्वेद, वैदिक संशोधन मंडल पूना।

(6) *कौटिल्य अर्थशास्त्र* (प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय भाग), उदयवीर शास्त्री, मेहरचंद लक्ष्मणदास, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1970 ई०

(7) *प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास*, ओम प्रकाश, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1980 ई०, पृ0स0—**214, 229**

(8) हिन्दू राज्य और समाज, शिव स्वरूप सहाय विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

(9) *चाणक्य नीति*, विश्वमित्र शर्मा, मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली पन्द्रहवाँ संस्करण, सन् 2008 ई०

(10) *प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास*, ओम प्रकाश, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण, सन् 1999 ई०, पृ0स0—**234**

(11) *प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति,* डॉ० संजय कुमार सिंह, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2006 ई०, पृ0स0—**131**

(12) *मनुस्मृति,* हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, पृ0स0—**2.140 से 2.142**

(13) *सामाजिक न्याय और दलित संघर्ष,* राम गोपाल सिंह, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, प्रथम संस्करण, 1994 ई०, पृ0स0—**53**

(14) *प्राचीन हिन्दू राजनीति के कुछ पहलू,* प्रो० दत्तात्रेय राम कृष्ण भंडारकर, अनुवादक डॉ० आनन्द कृष्ण, हिन्दी प्रकाशन समिति, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, प्रथम संस्करण, सन् 1974 ई०, पृ0स0—**86**

(15) *कौटिल्यीय अर्थशास्त्र का सर्वेक्षण*, डॉ० एम०वी० कृष्णराव, अनुवादक जी विश्वेश्वरय्या, रतन प्रकाशन मंदिर, आगरा, प्रथम संस्करण, सन् 1961 ई०, पृ0स0—**65**

(16) *भारतीय शिक्षा का इतिहास*, मदन मोहन तथा डॉ० मालती सारस्वत, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1972 ई०, पृ0स0—**47—48**

(17) वेद कथांक, गीता प्रेस, गौरखपुर।

(18) *नागरी प्रचारिणी पत्रिका।*

(19) अष्टाध्यायी, *पाणिनी,* पृ0स0—**12**